जागते रहो

आशा पाण्डेय

जागते रहो

श्रीहरी मेरे भाई का बड़ा बेटा है। अभी कुछ दिन पहले उन्नीस पूरा करके बीसवें में पड़ा है। जब वह छोटा था तब उसके नामकरण को लेकर मेरे भाई और मेरी भाभी में खूब कहा सुनी होती थी। मेरे भाई को भगवान के नाम पर से कोई नाम चाहिए था, जिससे मरते समय यदि वह बेटे को भी बुलाएँ तब भी भगवान का नाम मुँह से निकल सके पर मेरी भाभी को अनिल, सुनील, अतुल, राजेश जैसे नाम पसंद थे।

अंत में भाई ही जीता और बेटे का नाम रखा गया 'श्रीहरी'।

श्रीहरी इसी साल बी.ए. पास किया है। इस समय बरामदे में बैठा समीर को ट्यूशन पढ़ा रहा है। आजकल वह नौकरी की तलाश में है। रोज ही उसे एक, दो फार्म भरने होते हैं। कागज पत्तर, जेराक्स, फार्म तथा पोस्ट के खर्चे को निकालने के लिए ही श्रीहरी ने ट्यूशन पढ़ना शुरू किया है।

मैं अभी-अभी खेत से लौटा हूँ। भाभी धुआँई रसोई में सब्जी छौंक रही हैं। आँखें उसकी लाल हो गई हैं। मैं हर साल फसल की बुआई के समय सोचता हूँ कि इस बार जरूर गैस कनेक्शन ले लूँगा, लेकिन फसल कटने के बाद इरादा बदल देना पड़ता है। किसी नए सामान को खरीदने की कोई गुंजाइश ही नहीं रह जाती है।

मुझे पता है, भोजन मिलने में अभी देर है। मैं बरामदे में एक ओर पड़ी खाट पर उठंग कर आँख मूँद लेता हूँ।

श्रीहरी समीर पर खीझ रहा है, "तेरे माँ-बाप को बड़ा शौक चढ़ा है तुझे पढ़ाने का, कलेक्टर बनाएँगे तुझे? तुझे कुछ आता भी है? आठ साल का हो गया दो और दो का जोड़ भी नहीं बता पाता। चल, लिख दस बार - 2+2=4।'

'...मूरख की जात, खाली पैसा आ जाने से कुछ नहीं होता।'

मुझे श्रीहरी का इस तरह बोलना नागवार लगता है। समीर के बाप की बड़ी हैसियत श्रीहरी को क्यों चिढ़ा रही है! अरे, पढ़ाना है तो पढ़ाए, जाति और दिमाग पर क्यों चढ़ जाता है ये लड़का। वैसे भी समीर हमेशा कहाँ आएगा इसके पास पढ़ने। बस, यही एक महीने की छुट्टी भर ही तो। दुगुनी फीस दे रही है नंदा। बेचारी क्या जाने कि दुगुनी फीस दे देने से पढ़ाई नहीं आ जाती, उसके लिए तो दिमाग और मन लगना चाहिए।

उसका पति बोल गया है कि मायके में छुट्टियाँ तू इसी शर्त पर बिताएगी कि समीर को अब तक पढ़े एक भी पाठ भूले ना। बेचारी दौड़ पड़ी श्रीहरी के पास - "पैसा चाहे जितना ले लो भईया, पर जो कुछ ये पढ़ा है भूलने ना पाए, नहीं तो आगे से इस गाँव का मुँह देखना भी मेरे लिए दूभर हो जाएगा।"

लगता है सबेरे से श्रीहरी कुछ खाया नहीं है। भूख और झुँझलाहट दोनों माँ पर उतारता है - "कब बनेगी तेरी रोटी माँ? ...भूख के मारे जान निकली जा रही है ...पता नहीं क्या करती रहती है तू, सूखी रोटी भी समय पर नहीं दे पाती।'

कुछ पटकने की आवाज आई है रसोई से। जब से भाई मरा है भाभी अपने गुस्से को इसी तरह से निकालती है। अब श्रीहरी एवं गोविंद को गाली देना छोड़ दिया है उसने। ये दोनों मेरे भाई के भगवान थे। अब शायद मान गई है भाभी।

जब मेरा भाई इस दुनिया में था तब भाभी जब बेटे पर या भाई पर गुस्साती थी तो मेरे भाई को सुनाकर चिल्लाती - श्रीहरी, हरामजादे. ...नालायक और श्रीहरी शब्द को तो दाँतों के नीचे इतनी देर तक पीसती कि भाई समझ जाए कि वह उसके भगवान की ऐसी की तैसी कर रही है। भाभी को कई और गालियाँ आती थीं, तब भाभी कई और गालियाँ सीख रही थी।

भाई सब सुनता, सब समझता पर ध्यान ना देता। भाभी और चिढ़ती। जब भाभी को दूसरा बेटा हुआ तब भी भाई की ही चली और उसका नाम रखा गया 'गोविंद'।

मरते समय भाई अकेला था। क्या पता उसने श्रीहरी का नाम लिया था या गोविंद का। या दोनों का साथ-साथ। या किसी का भी नहीं।

मेरे मन में हमेशा ये खयाल आता है कि क्या मेरा भाई मरते समय मेरा भी नाम लिया होगा। वैसे मैं जानता था कि मेरा भाई मुझे खीझ-खीझ कर प्यार करता है और मेरी भाभी मेरे भाई को खीझ-खीझ कर गरियाती है। मैं भाभी के सिर पर भार जो था।

जब साल भर का था मैं, मेरे पिता को साँप ने डस लिया और जब छह साल का हुआ तो मेरी माँ कुएँ में गिर पड़ी। ...अब पता नहीं गिर पड़ी थी या कूद पड़ी थी। वैसे गाँव के लोग कहते हैं कि मेरे पिता के मरने के बाद मेरी माँ का दिमाग कभी-कभी सटक जाता था।

जब मैं बड़ा हो रहा था तो मुझे लगता था कि मेरे गाँव में बड़ी खुशहाली है, खेत लहलहा रहे हैं। फिर धीर-धीरे मुझे पता चला कि गाँव के अन्य घरो में खुशहाली होगी किंतु मेरा घर कर्ज में डूब रहा है। बाद के दिनों में तो मैंने यह भी जाना कि कुछ घरों को छोड़ कर गाँव के अन्य घरों में भी मेरे घर जैसा ही हाल है।

मैं भाई को कर्ज से उबार लेने की सोचता पर तरीका मुझे नहीं मालूम था।

गोविंद कहीं से घूम फिर के आया है। माँ का झुँझलाया चेहरा और श्रीहरी का चिल्लाना दोनों उसे चिढ़ा देते हैं - "ये घर नहीं, महाभारत का मैदान है। तभी तो मैं दिन भर घूमता रहता हूँ इधर-उधर। घर में आने का मन ही नहीं करता। ...और काका, तुम

क्या झुट्ठे आँख मूँदे लेटे हो. ...भीष्म पितामह बनते हो क्या? ...ये नहीं कि समझाओ इन लोगों को ...नरक बनाकर रख दिया है घर को।'

वैसे तो श्रीहरी बड़ा है किंतु, गोविंद के नाराज होने पर वह चुप ही रहता है। गोविंद ठहरा अक्खड़ मिजाज का। उखड़ गया तो सँभाले नहीं सँभलता। इसी स्वभाव के चलते पढ़ाई में भी आठवीं के आगे नहीं बढ़ पाया वह।

हुआ ये कि एक दिन मास्टर साहब ने उससे कुछ सवाल पूछ लिया जो वह बता नहीं पाया। मास्टर साहब ने भरी क्लाश में उसकी पिटाई कर दी। वहाँ तो वह कुछ नहीं बोला किंतु शाम को जब छुट्टी हुई तो गोविंद कुछ आगे बढ़कर रास्ते में मास्टर साहब का इंतजार करता खड़ा हो गया। मास्टर साहब को इस बात का अंदाजा नहीं था। गोविंद ने भी उन्हें समझने का मौका नहीं दिया और लपक कर उनकी साइकिल की हैंडिल पकड़ लिया। मास्टर साहब लड़खड़ा कर गिर पड़े। गोविंद दो-चार हाथ मास्टर जी को जमाकर वहाँ से भाग खड़ा हुआ और दूसरे दिन से फिर स्कूल नहीं गया।

श्रीहरी समझदार है। परिवार की परेशानी का उसे खयाल है। मेरा दिन-रात का परिश्रम भी उससे देखा नहीं जाता है। वह अब कोई न कोई नौकरी कर लेना चाहता है। किंतु, है तो वह भी चढ़ती उमर में ही। गुस्सा बलबला कर उसकी भी आँखों में कभी-कभी उतर ही आता।

गोविंद ने जो जहर उगला है, उसका असर सीधे तौर पर समीर पर पड़ा। श्रीहरी ने धड़ाधड़ दो-चार झापड़ समीर को लगा दिए और कहा कि, कल जब पहाड़ा याद हो जाए तब ही ट्यूशन के लिए आना।

गोल-मटोल, गोरा-सा समीर अपने नन्हें-नन्हें हाथों से आँसू पोछता जा रहा है और कॉपी-किताब समेटता जा रहा था है। थप्पड़ों से उसका गाल लाल हो गया। मैं तड़प उठा, बेचारा बच्चा, इन कमीनों की लड़ाई में पिस गया।

मैंने समीर को चुप कराया। उसकी कॉपी, किताब उसके बैग में डालकर उसे घर जाने के लिए कह दिया।

मेरे दिल में समीर के लिए इतनी ममता उमड़ने का कारण नंदा है। मेरे घर से दो घर पीछे उसका घर है। मैं स्कूल जाता था। नंदा नहीं जाती थी। मैं स्कूल में पाठ याद करता था। नंदा स्कूल के सामने के बगीचे में लकड़ियाँ बीनती थी।

फिर नंदा ने बकरियाँ चराना शुरू कर दिया। एक बकरी चराने का महीने में पचास रुपये उसे मिलते थे। धीरे-धीरे उसके पास दस बकरियाँ हो गईं। इस तरह पाँच सौ रुपये महीना वह कमाने लगी।

जब सातवीं की परीक्षा के बाद गर्मी की छुट्टी हुई तो मैंने भी बकरियाँ चराने का काम शुरू कर दिया। भाई ने मना किया किंतु, मैंने कहा, 'सिर्फ एक महीने चराऊँगा, आठवीं की किताब कॉपी के पैसे इकठ्ठा कर लूँ बस।'

मैं नंदा के साथ ही अपनी बकरियों को लेकर जाने लगा। मेरे पास सिर्फ पाँच बकरियाँ थीं।

झाड़ियों के बीच नंदा सूखी लकड़ियाँ खोजती और हमारी बकरियाँ हरी घास और पत्तियाँ। मैं भी नंदा को लकड़ियाँ बीनने में मदद करता।

नंदा अपने घर से नमक और चाकू लाती थी, मैं आम के पेड़ों से कच्चे आम तोड़ लेता था। फिर हम दोनों नमक लगा-लगाकर आम खाते थे, बातें करते थे।

मेरे पास चप्पल थी। मैं चप्पल पहन कर जाया करता था किंतु, नंदा नंगे पाँव आती थी। उसके पैर में दिन में कई-कई बार काँटे गड़ जाते थे। मुझे अच्छा नहीं लगता था। मैं नंदा से पूछता था -

"तुम चप्पल क्यों नहीं खरीद लेती हो?'

"मैं क्या बाजार जाती हूँ जो खरीद लूँ।' नंदा इठलाती थी।

"तो अपने बाबा से मँगा लो।'

"पैसा भी तो लगता है चप्पल खरीदने में।'

"हाँ लगता है, लेकिन तुम कमाती भी तो हो?'

"वो सब तो बाबा ले लेते हैं।'

"तो कह दो उनसे कि, तुम्हारे लिए चप्पल ला दें। कितनी बार तो काँटे गड़ते हैं तुम्हारे पैर में।'

'मार खाना है क्या मुझे।' कहकर नंदा खिलखिलाती और आम छीलने लगती।

जब महीना पूरा हो गया और मेरे हाथ में ढाई सौ रुपये आ गए तो शाम को मैं गाँव से दो किलोमीटर दूर लगने वाली बाजार में गया और साठ रुपये खर्च करके नंदा के लिए चप्पल खरीद लाया।

नंदा ने देखा तो बहुत खुश हुई। पहन कर अपने घर गई। नंदा की माँ ने पूछा तो नंदा ने बता दिया कि यह चप्पल मैंने उसे खरीद कर दिया है। फिर क्या था, नंदा की माँ हरहराती हुई मेरे घर पहुँच गईं और चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगीं कि मैं उनकी बेटी को चप्पल की लालच देकर बहला-फुसला रहा हूँ। मेरे लक्षण ठीक नहीं हैं, सो मुझे सुधर जाना चाहिए नहीं तो वो मुझे देख लेंगी।

मेरी भाभी पहले तो नंदा की माँ को समझाती रहीं कि दोनों बच्चे हैं, इस बात को इतनी दूर तक ना खीचें पर, जब नंदा की माँ ने अपना उग्र रूप बरकरार ही रखा तो भाभी भी अपनी रौ में आ गईं। दोनों ओर से खूब चिल्ला-चिल्लाकर गालियों की अदला-बदली होने लगी। मेरा भाई और नंदा का बाप भी आपस में उलझ पड़े। गाँव के कुछ लोगों के बीच-बचाव के बाद वह झगड़ा शांत हुआ। मैं अप्रत्याशित-सी घट जाने वाली उस घटना से हक्का-बक्का हुआ खड़ा था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि नंदा के लिए चप्पल ला देने से इतना हंगामा क्यों हो गया।

बाद में जब सब लोग अपने-अपने घर चले गए तो मेरे भाई ने जमकर मेरी धुलाई की। दूसरे दिन पता चला कि नंदा की भी खूब पिटाई हुई थी। उस दिन के बाद से हम दोनों को आपस में बात न करने की सख्त हिदायत दे दी गई थी। जिसे हम सिर झुकाकर मानते रहे। जिसे हमारे दिल ने कभी मानना नहीं चाहा।

जुलाई महीने से मैं फिर से स्कूल जाने लगा। नंदा पहले की ही तरह बकरियाँ चराती रही।

इस बीच मैंने महसूस किया कि मेरा भाई कुछ गुमसुम सा रहने लगा है। मैं कारण जानने का प्रयास करता किंतु असफल रहता। एक दिन मेरी भाभी, भाई से कुछ कह रही थी, मैंने अपना कान उन दोनों की बातों की ओर लगा दिया।

"अब गाँव में हवा फैलते देर नहीं लगेगी।'

'लगने दो, क्या कर सकता हूँ ...गाँव की चिंता नहीं है मुझे। मैं तो यह सोचकर परेशान हूँ कि बाबा की बनाई जमीन में कुछ और तो ना जोड़ सका उल्टे उसे बेच देना पड़ा। मैं सन्न रह गया - तो अब अपने पास खेत रहा ही नहीं क्या!

भाभी भाई को समझा रही थीं "दो एकड़ ही बेचे हो, छ एकड़ अब भी अपने पास है। भगवान ने चाहा तो ये गए दो एकड़ भी हम फिर से खरीद लेंगे।'

छ एकड़ क्यों गिनती हो तुम? अपने पास तो दो ही एकड़ रहे ना। बाबा के आठ एकड़ खेत में चार एकड़ तो प्रथमेश के ही हैं ना ...मैं अपने हिस्से का दो एकड़ बेचा हूँ, उसके हिस्से का कैसे बेच सकता हूँ?'

भाभी चुप हो गईं। मेरा मन किया कि मैं दौड़कर भाई के पास जाऊँ और कह दूँ कि कैसी बात करते हो दादा, तुम्हें जो सही लगे, करो। ये क्या मेरे हिस्से, अपने हिस्से की बात करते हो ...मैं तुमसे अलग हूँ? मैं तुमसे हिस्सा माँगूँगा दादा ...सोचा कैसे तुमने? लेकिन भाई-भाभी की बात मैं दूर बैठकर सुन रहा था। इसलिए उन बातों से अनजान-सा बनता हुआ मैं उठ खड़ा हुआ। मन में ये निश्चय किया कि मैं अब खूब मन लगाकर पढ़ाई करूँगा। मेरा भाई इतना परेशान है। मैं पढ़-लिख कर ही उसकी परेशानी को दूर कर सकता हूँ।

पर मैंने देखा कि पढ़ने में मेरा मन नहीं लगता था। मैं नवीं में भी फेल हो गया। पहले भी, आठवीं दो साल में पास किया था।

मेरे फेल होने पर मेरे भाई ने मुझे कहा तो कुछ नहीं किंतु, उनके चेहरे के हाव-भाव से साफ जाहिर हो रहा था कि उन्हें मेरे बार-बार फेल होने से बहुत दुख हो रहा है।

मैं नवीं में फिर से स्कूल जाने लगा पर, अब मेरा मन बहुत उदास रहने लगा था। किसी से हँस के बात करने का मन नहीं करता था। बड़ी शरम लगती थी।

अक्टूबर-नवंबर में निकलने वाले संतरे मेरे खेत में बड़ी अच्छी स्थिति में लदे थे। भाई खुश था। संतरे बेच कर होने वाली आमदनी का रोज अनुमान लगाता रहता। भाभी हँसती। घर कुछ घर जैसा लगने लगा था।

मैं हर दिन अपने पढ़ाई करने के समय को बढ़ा देता था और उम्मीद करता था कि जैसे इस बार संतरे के अच्छे पैसे मिलेंगे वैसे ही मैं भी इस बार अच्छे नंबर लाऊँगा।

खेत में व्यापारियों का आना-जाना बना था। भाई चार एकड़ के बगीचे का डेढ़ से पौने दो लाख माँग रहा था। संतरे थे ही नंबर एक के। किंतु, व्यापारी सवा लाख के ऊपर नहीं बढ़ रहे थे।

इधर संतरे में थोड़ी गलन शुरू हो गई थी। बड़े-बड़े पीले संतरे टप्प से चू पड़ते थे। भाई को चिंता हुई। उसने आनन-फानन में सवा लाख में सौदा कर लिया तथा दो हजार रुपये अग्रिम राशि के रूप में व्यापारी से ले भी लिया। व्यापारी दूसरे दिन आने को कह कर चला गया।

जब चार-पाँच दिन बीत गए और व्यापारी लौटकर नहीं आया तो भाई ने उसे फोन किया। व्यापारी ने अपनी मजबूरी बताई - कि उसने दो हजार अग्रिम राशि दे तो दी किंतु बाद में उसने महसूस किया कि सवा लाख में ये संतरे महँगे ही पड़ रहे हैं, इसलिए अब उसने अपना इरादा बदल दिया है।

भाई जैसे पेड़ पर से गिरा।

संतरे की गलन बढ़ गई थी। व्यापारियों में यह प्रचार भी हो गया था कि ये बगीचा तो सवा लाख के लायक भी नहीं है। अमुक व्यापारी तो अग्रिम देकर भी पीछे हट गया। अंत में मजबूर होकर भाई ने पचहत्तर हजार में ही बगीचे को बेच दिया। बाद में पता चला कि पचहत्तर हजार में खरीदने वाला व्यापारी सवा लाख देने से मुकर जाने वाले व्यापारी का ही आदमी है। ये व्यापारी पहले तिकड़म भिड़ा कर भाव को कम कर देते हैं फिर किसान की मजबूरी का फायदा उठाकर सस्ते में खरीद लेते हैं।

इतने वर्षों से खेती कर रहा मेरा भाई हर बार धोखा खाकर भी व्यापारियों के इन पैतरों को समझ नहीं पाता है। बड़ी जल्दी विश्वास कर लेता है। भाभी-भाई को मूरखराज कहती है। भाई कहता है, हम किसान हैं, व्यापारी नहीं। जमीन को उपजाऊ बनाकर फल और अनाज पैदा करना हमें आता है, बेचकर मुनाफा कमाना नहीं।

हमारे घर की सारी उम्मीद पर पानी फिर गया। दो एकड़ में जो सोयाबीन बोया गया था, उसकी उपज भी संतोषजनक नहीं हुई थी। बीज मजूरी खाद पानी के लिए जो कर्ज लिया था वो पिछले कर्ज में मिलकर ब्याज सहित बड़ी रकम बन रहा था।

इसी बीच मेरे गाँव में पहली किसान आत्महत्या हुई। किसनराव पाँच एकड़ जमीन का मालिक था। अपनी बेटी के ब्याह के लिए उसने दो लाख रुपये का कर्ज लिया था। सोचा था, कपास और सोयाबीन बेचकर एक-दो साल में लौटा देगा किंतु हर साल फसल किसी ना किसी कारण से खराब हो जा रही थी। ब्याज बढ़ता जा रहा था। बैंक से नोटिस पर नोटिस आ रही थी।

एक दिन सुबह-सुबह गाँव में शोर मचा कि किसनराव ने कीटनाशक पी लिया। पाँच सौ घरों का मेरा गाँव दहल गया था। इस घटना के बाद गाँव के उन घरों में जिनके ऊपर कर्ज का बोझ लद रहा था, जिसमें मेरा घर भी शामिल था, कई-कई दिनों तक चूल्हे नहीं जले।

वैसे इस बार मैंने नवीं से पास होकर दसवीं में प्रवेश ले लिया था किंतु, अब स्कूल ना जाकर भाई के साथ खेत में काम करने जाने का मन होने लगा था। मैं सोचता था कि कम से कम एक मजूर की मजूरी ही बचे। पर मेरा भाई मेरे इस फैसले को सिरे से खारिज करके मुझे ऐसी डपट लगाया कि मैं छुट्टी के दिन भी खेत में जाने से डरने लगा। भाई ने मेरे बारे में कुछ उम्मीद पाल रखी थी, किंतु मैं जानता था कि पढ़ाई के बूते मैं कुछ नहीं कर पाऊँगा।

जिस दिन मेरा दसवीं का रिजल्ट आया उसी दिन नंदा की शादी हुई। गाँव की औरतें नंदा को विदा करके अपने-अपने घर लौट रही थीं और मैं रिजल्ट वाला अखबार हाथ में लिए शहर से गाँव लौट रहा था। नंदा की शादी अच्छे खाते-पीते घर में हो गई थी। तीस एकड़ तो सिर्फ संतरे का बगीचा था। पिछले कई दिनों से तथा अगले कई दिनों तक नंदा के भाग्य की तारीफ होती रही गाँव में। मैं दसवीं में फेल हो गया था। मुझे तनिक भी दुख नहीं हुआ था। मैं भाई से खीझ कर कहना चाह रहा था कि, लो देखो रिजल्ट, बड़ा शौक चढ़ा है मुझे पढ़ाने का। लेकिन पता नहीं कैसे ज्यों ही मैंने भाभी को घर में आते हुए देखा, जो नंदा को विदा करके घर लौटी थीं, तो रिजल्ट वाले अखबार में ही अपना मुँह छिपाकर फफक-फफक कर रोने लगा। भाभी समझा रही थीं, कि कोई बात नहीं अगले साल पास हो जाओगे। रोते क्यों हो? पर मैं रोता रहा, बहुत देर तक रोता रहा। न जाने क्यों मुझे पूरा गाँव वीरान और उजड़ गया-सा लगने लगा था।

अगले दो सालों तक मैं हाईस्कूल का प्राइवेट फार्म भरता रहा और फेल होता रहा।

किसनराव की आत्महत्या के एक साल बाद गाँव में ये खबर पहुँची कि सरकार किसानों के कर्ज माफ कर रही है तथा आत्महत्या करने वाले किसानों के घरवालों को कुछ मुआवजा भी मिल रहा है। इस खबर के पंद्रह दिन बाद मेरे गाँव के गणेश अप्पाजी ने भी आत्महत्या कर ली। अभी गाँव इस दुख से उबर भी ना पाया था कि सुरेन गुडधे की घरवाली ने भी जहर पी लिया।

सुरेन गुडधे अपनी घरवाली की आत्महत्या को किसान आत्महत्या में दर्ज कराने के लिए पटवारी से लेकर पुलिस कचहरी तक दौड़ने लगा। असल में खेत सुरेन गुडधे के

ससुर का था जो उनकी मृत्यु के बाद बेटी के नाम चढ़ा, इसलिए किसान वही हुई। वैसे इधर कई सालों से वह बहुत बीमार भी चल रही थी।

गाँव की इन तीन आत्महत्याओं ने सबको चौकन्ना कर दिया था। गाँव में पुलिस दरोगा, पटवारी, कानूनगो, तहसीलदार के अलावा अखबार एवं टी.वी. चैनल वालों का भी आना-जाना शुरू हो गया था। अगल-बगल के गाँवों का भी यही हाल था। साल में एक-दो आत्महत्या सुनाई पड़ ही जाती थी। मेरा भाई, भाभी और अब तो मैं भी खेतों में मजदूर की तरह दिन भर काम करते और हर अगली फसल से मुनाफे की बात सोचते पर हर बार हमारी सोच गलत साबित हो जाती थी। बस किसी तरह हमारे परिवार का गुजारा चल रहा था। मेरे भाई की हताशा अब बढ़ती जा रही थी।

मैं बात-बे-बात भाई के सामने उन आत्महत्या करने वाले किसानों की कायरी और बुझदिली की बात करता, कहता कि, उनके मर जाने से सिर्फ उनकी चिंता कम हुई न, घरवालों के दुख और चिंता में तो और बढ़ोत्तरी हो गई। कैसे स्वार्थपने की बात है, घर के लोगों को दुख में छोड़ कर मर जाना।

मैं चाहता कि भाई मेरी बात से सहमत हो, हाँ में हाँ मिलाए ताकि मैं आश्वस्त हो सकूँ कि भाई ऐसा नहीं करेगा। पर भाई चुपचाप मेरी बात सुनता, सुनकर कुछ अधिक चुप हो जाता।

एक दिन जब टी.वी. पर यह बहस शुरू थी कि अन्य क्षेत्रों की तरह विदर्भ को भी सूखाग्रस्त क्षेत्र घोषित करना चाहिए था। नेता एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप लगा रहे थे तथा चीख-चीख कर सिद्ध कर रहे थे कि विदर्भ में सूखा पड़ा, विदर्भ में सूखा नहीं पड़ा, तो उसी चीख-पुकार के बीच अचानक भाभी चीखती हुई गोठे से भागी-भागी मेरे पास आई, 'प्रथमेश देख, दौड़, तेरे दादा के मुँह से झाग निकल रहा हैं।'

मैं गोठे की ओर लपका। भाई जमीन पर पड़ा तड़प रहा था। पास ही कीटनाशक दवा की खाली बोतल पड़ी थी। मैं बदहवास-सा चिल्ला-चिल्ला कर गाँव वालों को बुलाने लगा। भाई को डॉक्टर के पास ले जाने की तैयारी होने लगी पर, भाई ने सिर ढीला छोड़ दिया।

अब तक मेरी उमर उन्नीस साल की हो चुकी थी। मैंने तेरह साल के श्रीहरी तथा दस साल के गोविंद के सिर पर हाथ रखकर दोनों को सीने से चिपका लिया और मन ही मन सोच लिया कि, तुम दोनों को बाप की कमी कभी नहीं होने दूँगा।

शहर से कई लोग मेरे घर आए। अलग-अलग पार्टी के नेता, सामाजिक कार्यकर्ता, सरकारी लोग, अखबार, टी.वी. वाले। बस, मेरे हाँ कहने भर की देर थी, पैसे तो चल कर मेरे घर आ रहे थे किंतु, मैं तटस्थ रहा। अब मैं मदद लेकर क्या करता।

कैसे हाथ पसारता मुआवजे की रकम को लेने के लिए। भाई की मौत के बदले मदद!

कर्ज की माफी! कीमत? भाई की जान!

मैंने कह दिया, जिसको जो दर्ज करना हो करो पर, पैसा मैं एक भी नहीं लूँगा। मेरे भाई को क्यों नहीं मिली मदद? दौड़ तो रहा था वह कर्ज माफ कराने के लिए। क्या कर रही थी सरकार अब तक? पटवारी पैसा ले, लेकर बड़े और संपन्न किसानों का कर्ज माफ कर रहा था। और ये सामाजिक कार्यकर्ता? कहाँ थे अब तक?

मेरे गाँव के लोग मुझे कम अक्ल का पगलाया लड़का साबित करके भाभी को भड़का रहे थे। किंतु, भाभी पूरे विश्वास के साथ सब कुछ मेरे ऊपर छोड़ दी थी। आधे कर्ज की माफी का पेपर तो मेरे घर आ गया था किंतु जो मुआवजा मिलना था मैं उसे लेने नहीं गया। बाद में पता चला कि पटवारी और अन्य कर्मचारी मिलकर सारा पैसा खा गए।

खा जाएँ। ये गिद्ध हैं, इन्हें ऐसा ही भोग चाहिए।

गमी के दिन बड़े धीरे-धीरे खिसक रहे थे। बैंक से नोटिस का आना अब बंद था। भाभी चुप रहने लगीं थीं। श्रीहरी और गोविंद एक-एक साल आगे बढ़ रहे थे। दसवीं और बारहवीं दोनों में श्रीहरी ने बड़े अच्छे नंबर लाए थे। गोविंद का मन पढ़ने में नहीं था सो आठवीं के बाद उसने पढ़ाई छोड़ दी। पढ़ाई में मन ना लगने की पीड़ा मैं समझता था, इसलिए उसके ऊपर मैंने दबाव भी नहीं बनाया। अब वह फुरसती लड़कों के साथ गाँव में इधर-उधर घूमता रहता। कभी-कभी मेरे साथ खेत पर भी जाता।

अरसे बाद मेरे घर में कुछ खुशी तब लौटी जब श्रीहरी को डाकखाने में नौकरी मिली। भाभी नौकरी की खबर सुनकर मुस्कुराईं, मंदिर गईं, प्रसाद बाँटीं।

अब श्रीहरी की शादी के लिए तमाम रिश्ते आने लगे, लेकिन भाभी अड़ी थीं कि पहले प्रथमेश की शादी होगी फिर श्रीहरी की। मैं मना करता रहा। भाभी समझाती रहीं। समझाते-समझाते तीन साल और बीत गए लेकिन मैं शादी करने के लिए राजी नहीं हुआ। मैं मन ही मन दो बच्चों का बाप बन चुका था। उनका अच्छा भविष्य ही अब मेरा सपना था।

मैंने एक अच्छा परिवार और दिखने में ठीक-ठाक लड़की देखकर श्रीहरी की शादी पक्की कर दी। अब तक श्रीहरी ने कुछ पैसा जमा कर लिया था। किंतु शादी में होने वाले खर्च का बजट उतने में पूरा नहीं पड़ रहा था। बहुत विचार करने के बाद मैंने वो दो एकड़ जमीन जिसमें कभी कपास तो कभी सोयाबीन चना आदि बो लिया करता था, बेंच दिया। अब मात्र चार एकड़ का बगीचा भर बचा था हमारे पास।

जमीन बेचकर जो पैसे आए थे उसमें से मैंने सबसे पहले तो बचा हुआ कर्ज चुका दिया जो ब्याज के साथ अब तक बड़ी रकम हो चुका था तथा यदा-कदा बैंक की नोटिस भी आने लगी थी। कुछ पैसे नई बहू के मंगलसूत्र, साड़ी, चूड़ी आदि में खर्च हुए। बाकी बचे पैसे को मैंने गोविंद के नाम बैंक में जमा करवा दिया। मेरा विचार था कि इन पैसों से गोविंद के लिए कोई छोटी-मोटी दुकान खुलवा दूँगा।

एक दिन मैं खेत से लौटकर मुँह-हाथ धो रहा था कि कुछ लोगों के रोने चिल्लाने की आवाज आई। ध्यान से सुनने पर पता चला कि नंदा के घर से आ रही है। मैं और भाभी दौड़कर वहाँ पहुँचे। पता चला नंदा अब इस दुनिया में नहीं रही। हफ्ते भर की बीमारी में चल बसी।

खबर सुनकर न जाने क्यों मेरा जी हुआ कि मैं हुलक-हुलक कर रो पड़ूँ। ये बचपन की कौन सी डोर थी जो अब तक मेरे अवचेतन से जुड़ी थी। नंदा के ब्याह के बाद के वर्षों में तो मैंने उससे कभी बात भी नहीं की थी। वैसे भी बचपन के खेल-खिलौनों को छोड़ दिया जाए तो बात तो पहले भी कम ही होती थी।

मैंने कभी कुछ पाया हुआ-सा नहीं महसूस किया था किंतु, अब लुटा-लुटा-सा महसूस कर रहा था। जिंदगी कठिन लगने लग गई थी। किंतु श्रीहरी और गोविंद के लिए जीना ही था, ना चाहते हुए भी जीने का एक मकसद था मेरे पास।

पहले श्रीहरी हर शनिवार को गाँव आ जाता था तथा इतवार बिताकर सोमवार को सुबह ही फिर शहर चला जाता था किंतु शादी के बाद से अब वह अपनी पत्नी के साथ वहीं रहने लग गया था। लड़की कुछ पढ़ी लिखी थी। श्रीहरी ने उसे वहीं किसी प्राइवेट स्कूल में टीचर रखवा दिया था। उसकी पगार अधिक नहीं थी किंतु ट्यूशन पढ़ाकर वह भी महीने का दो ढाई हजार कमा लेती थी। अब गाँव में श्रीहरी का आना तीन-चार महीने के बाद ही कभी हो पाता था।

उस दिन वह सपरिवार गाँव आया था। उसका तीन साल का बेटा गोपाल अपनी तोतली जुबान में कुछ-कुछ कहता हुआ भाभी के पीछे-पीछे पूरे घर में घूम रहा था।

बच्चे का गोपाल नाम रखने पर इस बार भाभी चिढ़ी नहीं बल्कि, खुश हुईं थीं। इस नाम को रख कर श्रीहरी ने भाई के विचार और इस तरह से भाई को ही घर में जीवित रख लिया था। भाभी बड़े प्रेम से गोपाल को दुलारते हुए कन्हैया और मोहन भी जोड़ लेती थीं।

उस दिन, बड़े दिनों बाद रसोई से तरह-तरह के मसालों की सुगंध निकल कर घर भर में फैल रही थी, जो भूख को बढ़ा रही थी। हम सब गोविंद का इंतजार कर रहे थे कि वह आ जाए तो सब मिलकर भोजन करें। मुझे श्रीहरी से गोविंद के बारे में बात भी करनी थी कि आखिर वह कब तक इधर-उधर भटकेगा। क्यों ना अब बैंक में रखे पैसों से उसके लिए कोई दुकान खुलवा दी जाए। शादी भी तो करनी है उसकी। गोविंद की उपस्थिति में ही ये सब बात करना ठीक रहेगा।

रात के करीब साढ़े आठ बज रहे थे। गोविंद बदहवास-सा चिल्लाता हुआ आया कि, - अप्पासाहेब बेले (नंदा के पिता) जहर पी लिए। आँखें उलट गई हैं, लोग डॉक्टर बुलाने गए हैं लेकिन अब उनकी जान जा चुकी है।

सुनते ही मैं और श्रीहरी अप्पासाहेब बेले के घर की ओर दौड़े। घर के एक कमरे में जमीन पर ही पड़े थे अप्पासाहेब। कर्ज का बोझ, फसल की मार तथा बेटी का गम, नहीं सह पाए अप्पाजी।

अब ना भूख रह गई थी और ना नींद। श्रीहरी तो बार-बार उठकर अपने बिस्तर पर बैठ जाता था। नींद मुझे भी नहीं आ रही थी। पिछले साल श्रीहरी ने मुझे एक मोबाइल खरीद कर दिया था। सोते समय मैं अपने सिरहाने मोबाइल रख लिया था। जब बेचैनी अधिक बढ़ गई और लेटे रहना असंभव-सा लगने लगा तब मोबाइल को तकिया के नीचे से निकाल कर मैंने समय देखा - सुबह के चार बज रहे थे, मैं उठ बैठा।

इधर कुछ दिनों से मैं पहले से अधिक निराश रहने लगा था। संतरे की फसल दो बार से लगातार खराब हो रही थी। सरकार की ओर से खराब हुई फसल की भरपाई के लिए कुछ पैसा मिलने वाला था। मैं पटवारी से बार-बार मिलता रहा। पटवारी आश्वस्त करता रहा पर पैसा मुझे ना मिला। मेरी फसल से कम खराब हुई फसल के मालिकों को पैसा मिल गया। कुछ लोगों ने बताया कि मिलने वाले पैसे में से कुछ हिस्सा पटवारी का भी लगाओ तब पाओगे पैसा।

मैं पटवारी से लेन-देन की बात करने जाने ही वाला था कि अप्पासाहेब बेले की मौत ने मुझे झकझोर कर रख दिया। मैंने मन ही मन निश्चय किया कि पैसा मिले या ना मिले मैं पटवारी के पास घूस की बात करने नहीं जाऊँगा।

अप्पासाहेब बेले की मौत के बाद श्रीहरी या तो गुम-सुम बैठा रहता था या गाँव में घूमता रहता था। उसने पंद्रह दिन की छुट्टी ली थी। दस दिन बीत गए थे। ग्यारहवें दिन श्रीहरी ने मुझसे कहा - "काका मैं गाँव के लिए कुछ करना चाहता हूँ... कुछ कहना है मुझे गाँववालों से।'

'गाँववालों से क्या कहेगा तू?' मैं हकबकाया-सा समझने की कोशिश कर रहा था।

"दादा, ज्ञान पिलाने वाले इस गाँव में कई आए और चले गए।' गोविंद स्वभाव के अनुरूप बोल पड़ा। 'ये पढ़े-लिखे लोग बड़े लच्छेदार जबान से दुख को सहला देते हैं और सोचते हैं कि चलो पढ़ाई कहीं तो काम आई ...इतना ही नहीं, इनका बोला अखबारों में छपता है... इनकी फोटो..." गोविंदऽ ऽ... श्रीहरी चिल्लाया - "कभी तो ढंग की बात किया कर।'

'ढंग की बात का क्या मतलब है दादा? सही तो कह रहा हूँ। तुम जो अभी गाँव में घूम-घूम कर अपने दोस्तों के साथ खिचड़ी पका रहे हो - सब पता है मुझे, उससे तुम क्या उखाड़ लोगे? पाँच दिन बाद ही तो फिर से निकल लोगे इस गाँव से और तीन-चार महीने मुँह भी नहीं दिखाओगे। पोस्ट ऑफिस में बैठकर खेती-किसानी का दर्द नहीं समझा जाता दादा।'

"बड़े भाई से ऐसे बात करते हैं गोविंद? चल माफी माँग।' अब तक मैं श्रीहरी की मंशा समझ गया था। गोविंद तो जनम का अक्खड़ मिजाजी। माफी क्या माँगता, एक झटके में वहाँ से उठ कर चला गया।

"भगवान जाने इस लड़के का क्या होगा। मैं तो कहती हूँ इसकी शादी अब जल्दी ही कर देनी चाहिए। जिम्मेदारी आएगी तो काम भी करेगा और स्वभाव भी बदलेगा।' अब तक चुप बैठी भाभी ने कहा।

"स्वभाव क्या खाक बदलेगा, लेकिन हाँ, शादी के बारे में तो सोचना ही पड़ेगा।' मैं भाभी की हाँ में हाँ मिलाकर खेत की ओर चल पड़ा, श्रीहरी मेरे पीछे हो लिया।

काका कुछ ना कुछ तो करना ही पड़ेगा न? क्या साल-दर-साल ऐसे ही होती रहेंगी आत्म हत्याएँ?'

"क्या कर पाएगा तू श्रीहरी?'

"कुछ भी, जैसे आज रात से ही दस लड़कों की टोली, जिसमें मैं भी रहूँगा, गाँव में घूम-घूम कर लोगों का हौसला बढ़ाने वाले गीत गाएगे, भजन गाएगे।'

'क्या होगा उससे श्रीहरी?'

"होगा काका, हिम्मत ही तो हार गए हैं लोग। समस्याएँ तो पहले भी थीं खेती में लेकिन, क्या कभी कोई आत्महत्या करता था? ...रही बात कर्ज की तो क्या पहले नहीं थे साहूकार जमींदार। कम चूसते थे खून? आज तो परिस्थिति पहले से अच्छी है काका। और ये कर्ज? ...क्यों ले लेते हैं हम जल्दी से कर्ज? सुखदेव काका के ऊपर जो कर्ज है वह तो उन्होंने बेटी की शादी के लिए ही लिया था ना? हर कोई कर्ज ले लेकर दहेज देता है इसलिए दहेज भी बढ़ रहा है। ...हाँ, मैं मानता हूँ हर साल किसानों को महँगे बीज खरीदने पड़ते हैं। यह बड़ी समस्या है। रासायनिक खाद में भी पैसे अधिक लगते हैं, पर धीरे-धीरे इन सारी समस्याओं के भी हल निकलेंगे। पहले किसानों में हिम्मत तो आए ...हम निराशा से उबरें तो सरकारी तंत्र से भी लड़ेगें काका।'

"ये कोई उपाय है श्रीहरी? समस्या का असली कारण समाप्त होगा तब रुकेंगी आत्महत्याएँ। ...और जानते हो, असली समस्या पैसे की है, गरीबी की है। खाद, पानी बीज की है, पैदावार की है, उपज के सही मूल्य मिलने की है। जब इसमें कोई सुधार होगा तब रुकेंगी आत्महत्याएँ।"

तुम ठीक कह रहे हो काका, लेकिन पहला कदम तो उठाए हम ...काका मैं सिर्फ भजन गाने की बात नहीं कर रहा हूँ। धीरे-धीरे मैं यह प्रयास करूँगा कि गाँव के हर घर में कोई एक व्यक्ति या तो नौकरी में हो या कुछ छोटी-मोटी दुकान ही खोले। गाँव का हर व्यक्ति गाँव की दुकानों से ही समान खरीदे। मजदूरी में पैसा ना खर्च करते हुए एक-दूसरे के खेतों में श्रमदान करें। मजदूर रखना ही पड़े तो वह अपने गाँव का ही हो, जिससे पैसा गाँव के ही किसी घर में जाए। ऐसे बहुत से काम हैं काका, जिन्हें मैं करना चाहता हूँ।'

'गाँव में कौन तेरी बातों पर विश्वास करेगा? कौन मानेगा तेरी हवा में उड़ती इन बातों को?'

"तुम तो मानो काका, गाँव के लोग भी मानेंगे। सबको इस समस्या का समाधान चाहिए ना? ...एक बार में जल्दी से मान जाएँगे ये तो मैं भी नहीं सोच रहा हूँ, लेकिन धीरे-धीरे मानेंगे काका।

"तुम तो पाँच दिन बाद वापस जा रहे हो।' मैंने बड़ी दबी आवाज में कहा।

हाँ, लेकिन अब मैं हर शाम गाँव आया करूँगा। मेरे पास स्कूटर है, एक घंटे में तो शहर से गाँव पहुँचूगा। विभा गोपाल के साथ शहर में रहेगी। कोई डर नहीं है। ...मैं अपने गाँव के लिए एक प्रयास करना चाहता हूँ काका।'

मैं श्रीहरी की बातों से सहमत भी था और असहमत भी।

मेरा मन भी तो निराशा में ही घिरा रहता है। क्या कारण है इतनी निराशा का। श्रीहरी की नौकरी है। गोविंद भी खेती-बाड़ी में कुछ ना कुछ मदद करता ही रहता है। कर्ज मैं अदा कर चुका हूँ। गोविंद के भविष्य के लिए कुछ पैसे भी मेरे पास सुरक्षित हैं। फिर मैं क्यों दिन-रात बुझा हुआ-सा रहता हूँ! इतनी उदासी मुझे कब भटका दे, क्या पता।

सच कह रहा है श्रीहरी - मर जाना तो किसी समस्या का हल नहीं है ना, पर श्रीहरी जिस तरह से हल निकालने की बात कर रहा है वह सारी बातें भी तो हवा में उड़ती हुई-सी लग रही हैं। कौन मानेगा इसकी बात। नया झगड़ा जरूर शुरू हो जाएगा गाँव में।

पर श्रीहरी धुन का पक्का हैं। हर शाम गाँव आने लगा। अँधेरा होते ही टोली बनाकर लड़के गाँव में घूमने लगते हैं। लड़को का मानना है कि एकांत और अँधेरे में निराशा ज्यादा उपजती है।

अब रात में जब भी नींद खुलती है तो - 'जीवन है अनमोल प्यारे - जीवन है अनमोल, समझ तू इसका मोल प्यारे, जीवन है अनमोल।' की मधुर धुन कानो में पड़ती या फिर "हे कृष्ण, गोविंद हरे मुरारी, हे नाथ नारायण वासुदेवा' अथवा "उघड दार देवा आता उघड दार देवा' जैसे भजनों के सुर मन को मुग्ध कर देते। लड़के बीच-बीच में 'जागते रहो', 'होश में रहो', की पुकार भी लगाते रहते।

अब गाँव के बड़े-बूढ़े भी बच्चों के इस प्रयास से गद्गद होकर कहना शुरू कर दिए हैं कि जब हमारे बच्चों में इतना साहस है तो हमें भी हिम्मत रखनी होगी।

अब तक गाँव में दो-चार दुकानें थीं। अब श्रीहरी और उसके दोस्तों के प्रयास से सात और दुकानें खुलीं। लड़कों ने यह तय किया कि - एक जैसे सामान की गाँव में एक ही दुकान होगी और गाँव के लोग सब उसी दुकान से सामान खरीदेंगे। गोविंद के लिए तय हुआ कि उसकी दुकान में सिर्फ घी, तेल, गुड़, शक्कर और बताशे होंगे बस, और ये चीजें गाँव की दूसरी दुकानों में नहीं होगी। सब यहीं से खरीदेंगे। एक दुकान गेहूँ, चावल के लिए तय हुई। एक दाल के लिए, एक दवाइयों के लिए तो एक कपड़ों के लिए। एक मिठाई के लिए। सब्जी-भाजी की भी एक ही दुकान। इस तरह से गाँव के लोगों के उपयोग में आने वाली वस्तुओं की पूरी बाजार गाँव में ही लग गई। अब हर किसी की दुकान बराबर चल रही थी। किसी को भी ग्राहक की कमी नहीं थी।

कुछ लड़कों को श्रीहरी ने शहर में छोटा-मोटा व्यवसाय शुरू करा दिया। मन्नू को अपने पोस्ट ऑफिस के सामने लिफाफा, गोद, फार्म आदि बेचने के लिए बैठा दिया तो अप्पासाहेब बेले के लड़के के लिए वहीं चाय पकौड़ों का ठेला लगवा दिया। कुछ लड़कों की पढ़ाई तथा कुछ लड़कों की गाँव में ही मजदूरी की भी पक्की व्यवस्था हो गई।

मेरे गाँव में इतनी एकता! पहले कभी ना दिखी! मैं आश्चर्यचकित था। साल भर में ही इतना परिवर्तन कैसे हो गया गाँव में! पहले घर, घर में लोग डरे-डरे सहमे-सहमे ही रहते थे कि पता नहीं कब किसके घर से क्या सुनाई पड़ जाए, पर अब वह वीरानगी घट रही है। बस यही निराशा ही तो हटानी थी गाँव से, जो नए लड़कों ने कर दिखाया।

इस बीच श्रीहरी का प्रमोशन हो गया वह अब बड़ा बाबू बन गया। गोविंद की शादी हो गई। दो बच्चे हो गए। भाभी का दिन उसके बच्चों के साथ अच्छे से बीतने लगा।

अब मेरी समझ में भी आ गया कि सिर्फ परिस्थितियाँ ही नहीं हैं आत्महत्या का कारण। असली कारण हथियार डाल देना है। अब तो मैं भी रात में भजन गाते हुए लड़कों के साथ घूमता हूँ।

...जीने का एक मकसद फिर मिल गया है मुझे।

https://www.hindiadda.com/jagate-raho/